

सार्वभौम व्यवस्था

जीवन विद्या राष्ट्रीय सम्मलेन में बाबा श्री नागराज शर्मा का
उद्बोधन (४ अक्टूबर २००९, हैदराबाद)

जय हो! मंगल हो! कल्याण हो!

इस शुभ-कामना से हम यहाँ मिले हैं। आज मेरे वक्तव्य का मुद्दा है - "सार्वभौम व्यवस्था"। सार्वभौम व्यवस्था कैसे होती है? पिछले तीन दिनों में आपके सम्मुख प्रस्ताव रखा है कि 'विकल्प' स्वरूप में 'समझदारी' से संपन्न होने की आवश्यकता है। 'समझदारी' से संपन्न होने के बाद 'प्रमाणित' करने की आवश्यकता है। यह मनुष्य के सामने 'आवश्यकता' के स्वरूप में रखा हुआ है। सन् २००० तक ज्ञानी, अज्ञानी, विज्ञानी इस धरती पर जो कुछ भी सोचा, निर्णय लिया, किया - उसके फल-परिणाम में यह धरती बीमार होते हुए देखने को मिला। अपना-पराया की दूरियां बढ़ते हुए देखने को मिला। देशों की सीमाओं पर विभीषिकाएँ बढ़ता हुआ देखने को मिला। इन सब को देखने पर मनुष्य-जाति में सोचने का मुद्दा उभरा - "हम सही कर रहे हैं, या ग़लत कर रहे हैं?"

उसके उत्तर में विकल्पात्मक स्वरूप में "समझदारी" का यह प्रस्ताव है। समझदारी को अस्तित्व दर्शन ज्ञान, जीवन-ज्ञान, और मानवीयता पूर्ण आचरण ज्ञान के संयुक्त रूप में अध्ययन-गम्य कराने का व्यवस्था दिया। इसको अध्ययन करने वाले आज लगभग २००० लोग तो हो चुके हैं। अब यदि आपकी इच्छा हो तो आप भी अध्ययन कर सकते हैं। यह आपको सूचना देना चाहा।

इस प्रकार यदि अध्ययन होता है तो मनुष्य का "मानव चेतना" पूर्वक जीना बनता है। अभी तक मनुष्य-जाति "जीव-चेतना" में जिया है - यह समीक्षित हुआ। जीव-चेतना में जीते हुए मनुष्य ने जीवों से अच्छा जीने का प्रयत्न किया। इन्हीं प्रयत्नों के फलन में यह धरती ही बीमार हो गयी - जिससे पुनर्विचार की आवश्यकता बन गयी। पुनर्विचार के लिए विकल्पात्मक रूप में "समझदारी" का प्रस्ताव है।

अस्तित्व-दर्शन ज्ञान, जीवन-ज्ञान, मानवीयता पूर्ण आचरण ज्ञान - इन तीनों को छोड़ कर हम

कभी भी "समझदार" नहीं होंगे। अभी भी नहीं, करोड़ वर्ष के बाद भी नहीं। इस ज्ञान को परीक्षण करने और शोध करने का अधिकार हर व्यक्ति के पास रखा है। यह मैं अपने अनुभव से बता रहा हूँ।

ऐसे समझदारी से संपन्न होने पर हमको "सर्वतोमुखी समाधान" हासिल होता है। इस बात को मैंने अनुभव किया है, जिया है, प्रमाणित किया है। सर्वतोमुखी समाधान को मैं जी कर देखा हूँ, प्रमाणित किया हूँ - इससे "सुख" मिलता है। प्रकारांतर से, आज पैदा हुआ आदमी, कल मरने वाला आदमी - सभी सुखी होना चाहते हैं। मानव-चेतना से संपन्न होने पर हरेक व्यक्ति के पास समाधान उपलब्ध होगा। समाधान पूर्वक हम सुखी होते हैं। समस्या पूर्वक दुखी होते हैं। "सर्वतोमुखी समाधान" यदि आप हासिल करना चाहते हैं तो उसके लिए "मध्यस्थ-दर्शन सह-अस्तित्ववाद" अध्ययन के लिए प्रस्तुत किया है। उसको आप अध्ययन कर सकते हैं।

"जीवन विद्या शिविर" इस प्रस्ताव की "सूचना" देता है। सूचना मिलने के बाद "उत्साहित" होना होता है। उत्साहित होने के बाद यदि "समझने" का उद्देश्य बनता है, तो उसके लिए व्यवस्था है। इस पर आप यदि इच्छा हो तो ध्यान दे सकते हैं। मेरे कहने मात्र से मत करिए। आपकी अपनी इच्छा बनती हो तो अध्ययन करिए। अभी रायपुर के पास एक छोटे से गाँव अछोटी में लगभग १०० लोग अध्ययन कर रहे हैं।

सह-अस्तित्व में प्रगटन विधि पूर्वक मनुष्य-शरीर रचना धरती पर प्रगट हुई। इस प्रगटन में किसी भी मानव का कोई भी हाथ नहीं है। इस धरती पर अभी तक जितने भी मनुष्य अब तक प्रगट हुए, यहाँ जो इतने लोग दिख रहे हैं - किसी का भी धरती पर मनुष्य-शरीर रचना प्रगटन में हाथ नहीं है। मनुष्य-शरीर रचना को प्रकृति स्वयं-स्फूर्त विधि से प्रस्तुत कर दिया। जागृति को प्रमाणित करने योग्य शरीर धरती पर बन चुकी है।

समझदारी के बिना हम समाधान संपन्न होंगे नहीं। मानव-जाति समाधान-संपन्न होने के बाद न सीमा-सुरक्षा रहेगी, न अपने-पराये की दूरियां रहेंगी, न "भ्रम" रहेगा।

"भ्रम" का स्वरूप क्या है? जीवन ही शरीर को जीवंत बना कर रखता है। जीवंत बनाने के फलस्वरूप शरीर में संवेदनाएं व्यक्त होती हैं। संवेदनाओं को देख कर जीवन ही बुद्ध बनता है और शरीर को जीवन मान बैठता है। यही भ्रम है। यह भ्रम रहने तक जीवन शरीर के मरने और जीने को अपने साथ जोड़ लेता है। शरीर को जीवन मानना ही भ्रम का मूल स्वरूप है।

समस्या भ्रम-वश है। समाधान जागृति पूर्वक होता है।

यदि हम समस्या प्रस्तुत करते हैं, तो हम भ्रमित हैं। यदि हम 'सर्वतोमुखी समाधान' प्रस्तुत करते हैं, तो हम जागृत हैं। हर व्यक्ति इस बात का "स्व-निरीक्षण" कर सकता है।

विकल्पात्मक मध्यस्थ-दर्शन का अध्ययन करने से मानव "सर्वतोमुखी समाधान" संपन्न होता है। सभी विधा में समाधान प्रस्तुत करने योग्य होता है। अध्ययन के बारे में बताया - हर शब्द का अर्थ होता है। अर्थ के स्वरूप में अस्तित्व में वस्तु होता है। अध्ययन पूर्वक वस्तु साक्षात्कार होना, बोध होना, अनुभव होना। अनुभव होने के बाद प्रमाण होना। इस तरह मनुष्य अस्तित्व में अध्ययन कर सकता है, अनुभव कर सकता है, और अनुभव को जी कर प्रमाणित कर सकता है।

सर्व-मानव सुख चाहते ही हैं। सुख पूर्वक जीना चाहते ही हैं। वे एक शरीर-यात्रा में ही कैसे समझदार हों, समाधानित हों, प्रमाणित हों - उस चौखट में पूरे अध्ययन की व्यवस्था है। एक ही शरीर यात्रा में! अनेक शरीर यात्राओं की बात नहीं है। एक ही शरीर-यात्रा में "सम्पूर्ण बात" का अध्ययन कर सकते हैं।

"सम्पूर्ण बात" है - सह-अस्तित्व स्वरूप में अस्तित्व का अध्ययन हो जाए, और स्वयं का अध्ययन हो जाए। तब सम्पूर्ण अध्ययन हुआ। इसमें से एक भी भाग को छोड़ दें तो सम्पूर्ण अध्ययन नहीं हुआ।

अभी जो अध्ययन प्रचलित है वह केवल सुविधा-संग्रह करने के लिए है, अपराध करने के लिए है, दूसरों को बुद्ध बनाने के लिए है। अभी मानव-जाति के पास जो भी विद्वता है - वह इन तीन जगह में ले जाने के लिए ही कामयाब है। अभी तक मानव-जाति के पास जो भी विद्वता है वह समाधान प्रस्तुत करने में असमर्थ है। न्याय प्रस्तुत करने में असमर्थ है। सत्य प्रस्तुत करने में असमर्थ है। अभी तक मैं सुप्रीम कोर्ट के तीन retired judges से बात किया हूँ। वे कहते हैं - हमें न्याय का पता नहीं है, हम केवल "फैसला" करते हैं।

"सत्य" शब्द हम जानते हैं - पर सत्य क्या है, सत्य का प्रभाव क्या है, इसके बारे में हम सर्वथा अनभिज्ञ हैं। सत्य बोध कराने की व्यवस्था अभी तक शिक्षा में आया नहीं है। इसीलिये इस विकल्प के द्वारा न्याय, धर्म, और सत्य को शिक्षा में बोध कराने की व्यवस्था रखा है। छत्तीसगढ़ राज्य शिक्षा से विद्वान यहाँ हमारे बीच बैठे हैं। वे भी इसकी गवाही दे सकते हैं। इस कार्यक्रम में हर व्यक्ति "स्वेच्छा" से भागीदार हो सकते हैं।

यह कोई "उपदेश" नहीं है।

मैं स्वयं एक वेदमूर्ति परिवार से हूँ। उपदेश देने में मैं माहिर हूँ। उपदेश की विधि है - "जो न मैं समझा हों, और न आप समझोगे - उसको मैं आपको बताऊँ, फिर आप मुझे कुछ दे कर खुश हों, मैं आप से वह ले कर खुश होऊँ!" इस तरीके को मैंने छोड़ दिया - क्योंकि यह निरर्थक है, इससे कोई प्रयोजन नहीं निकलता। प्रयोजन जिससे निकलता है, उसको अनुसन्धान करने में मैंने २५ वर्ष लगाया, फिर और २५ वर्ष लगाया उसको संसार को व्यवस्थित रूप में प्रस्तुत करने के लिए, फिर १० वर्ष से इस बात को लोगों के सम्मुख रखने योग्य हुए। आज इस बात को करीब २००० लोग अध्ययन कर रहे हैं। आगे और लोग इसको अध्ययन करेंगे - यह आशा किया जा सकता है। जो चाहें, वे अध्ययन करने में भागीदारी कर सकते हैं।

अध्ययन कराने को लेकर हम प्रतिज्ञा किए हैं - "ज्ञान व्यापार" और "धर्म व्यापार" हम नहीं करेंगे। अध्ययन के लिए कोई दक्षिणा उगाहने की बात नहीं है। अध्ययन के लिए कोई शुल्क नहीं रखा है। ज्ञान जीवन सहज-अपेक्षा है। ज्ञान को टुकड़ा करके बेचा नहीं जा सकता। अभी जो "बुद्धि-जीवी" कहलाये जाते हैं - वे अपने ज्ञान को "बेच" रहे हैं। उनसे पूछने पर - "ज्ञान को कैसे बेचोगे? 'ज्ञान' को तुम क्या जानते हो?" - उनसे कोई उत्तर मिलता नहीं है। इस बात का कोई उत्तर देने वाला हो तो मैं उसको फूल माला पहना करके सुनूंगा! ज्ञान को "बेचने की विधि" को मुझे बताने वाला आज तक मिला नहीं है। अभी ज्ञान-व्यापार और धर्म-व्यापार में कितने लोग लगे हैं, उसका आंकड़ा रखा ही है। सारी दरिद्रता, सारी अपराध-प्रवृत्ति धर्म-व्यापार और ज्ञान-व्यापार से ही है।

समझदार होने के बाद हम धर्म-व्यापार करेंगे नहीं, ज्ञान-व्यापार करेंगे नहीं। मैं यदि "धर्म" को समझता हूँ तो मैं अपने बच्चे को उसके योग्य बनाऊँ, अपने अडोस-पड़ोस के व्यक्तियों को उसके योग्य बनाऊँ, अपने संपर्क में आने वाले व्यक्तियों को उसके योग्य बनाऊँ - यही बनता है। मैं वही कर रहा हूँ। मेरे संपर्क में आने वाले व्यक्तियों के बीच मैं काम कर रहा हूँ। व्यापार से मुक्त - धर्म और ज्ञान का बोध कराने की मैंने व्यवस्था कर दिया।

धर्म-आचार्यों से मैंने इस बारे में (ज्ञान-व्यापार और धर्म-व्यापार को लेकर) बात-चीत किया। इस बात को छेड़ने से आचार्य-लोग बहुत नाराज होते हैं। मैं उन आचार्यों की बात कर रहा हूँ जो शंकराचार्य पद पर बैठे हैं। एक आचार्य नाराज नहीं हुए। वे थे - श्रृंगेरी मठ के शंकराचार्य! वे अमरकंटक आए थे, उसके बाद उनसे सत्संग हुआ, उन्होंने मेरी बात को अध्ययन करने के बाद बताया - "तुमने एक महत कार्य किया है। हम तो धर्म के लक्षणों को बताकर शिष्टानुमोदन करते हैं, तुमने धर्म का अध्ययन कराने का व्यवस्था किया है।" ऐसा एक ही ऐसे व्यक्ति ने कहा। दूसरा ऐसे व्यक्ति ने अभी तक कहा नहीं है। इन सब बातों से जो मुझे संतोष मिलना था,

मिलता रहा। मैं आगे-आगे बढ़ता गया, और इस प्रकार चलते-चलते आज आप लोगों के सान्निध्य में आ गया।

समझदार व्यक्ति व्यवस्था में जीता है। समझदार व्यक्ति सर्वप्रथम परिवार में समाधान-समृद्धि पूर्वक व्यवस्था में जीता है। ऐसे परिवार में नर-नारियों में समानता रहता है। इस प्रकार परिवार में सुख-शान्ति पूर्वक जीना बनता है। सभी परिवार ऐसे सुख-शान्ति पूर्वक जीने वाले होने पर "अखंड समाज" होता है। सभी परिवार समाधान-समृद्धि संपन्न होने पर अखंड-समाज का गठन होता है। उससे कम में अखंड-समाज होने वाला नहीं है। ऐसे समाज में हम अभय-संपन्न होते हैं। भय-मुक्त होते हैं। अभी इसके अभाव में कौन क्या कर देगा - यह आशंका बना ही रहता है। मनुष्य-जाति का सारा इतिहास इस बात की गवाही है। सभी बात आपके सम्मुख है।

अभय-संपन्न होने के बाद हम "सार्वभौम व्यवस्था" के पक्ष में जाते हैं। चारों अवस्थाओं का परस्पर संतुलन ही सार्वभौम-व्यवस्था है। इसमें नियम, नियंत्रण, संतुलन, न्याय, धर्म, सत्य पूर्वक जीना प्रमाणित होता है। इन प्रमाणों के साथ मानव सुख, शान्ति, संतोष, आनंद पूर्वक जीने की स्थिति में आता है। सुख, शान्ति, संतोष, और आनंद जीवन सहज-अपेक्षा है।

समाधान, समृद्धि, अभय, और सह-अस्तित्व - ये चार घाट हैं।

व्यक्ति के स्तर पर समाधान।

परिवार के स्तर पर समाधान-समृद्धि।

समाज के स्तर पर समाधान-समृद्धि-अभय।

समग्र-व्यवस्था के स्तर पर समाधान-समृद्धि-अभय-सह-अस्तित्व।

समाधानित होने के लिए "अध्ययन" है। अध्ययन कराने का शुरुआत मैंने किया है।

"सार्वभौम व्यवस्था" हो जाने पर क्या होगा?

सार्वभौम-व्यवस्था में हम "सत्य" को प्रमाणित करते हैं। सह-अस्तित्व परम सत्य है। सह-अस्तित्व को हम व्यवस्था में प्रमाणित करते हैं। इस तरह मानव प्रकृति-सहज विधि से, अस्तित्व-सहज विधि से, सह-अस्तित्व सहज विधि से जीता है। इसको हर व्यक्ति सोच सकता है, समझ सकता है, जी सकता है, प्रमाणों को प्रस्तुत कर सकता है।

सार्वभौम-व्यवस्था में हम पाँच आयामों में बहुत अच्छी तरह जी पाते हैं। "सार्वभौम व्यवस्था"

में मनुष्य के जीने के पाँच आयाम हैं : -

- (१) शिक्षा-संस्कार
- (२) न्याय-सुरक्षा
- (३) स्वास्थ्य-संयम
- (४) उत्पादन कार्य
- (५) विनिमय कोष

शिक्षा-संस्कार से मानव-परम्परा में "समाधान" उपलब्ध होगा।

इससे सबके लिए न्याय-सुलभता हो ही जायेगी। समझदार परिवार में संबंधों में न्याय होता ही है।

समझदारी के बाद न्याय कोई दुरुह नहीं है।

भ्रमित रहते तक न्याय महान-दुरुह है।

समझदारी के बाद - संबंधों की पहचान, मूल्यों का निर्वाह, मूल्यांकन, और उभय-तृप्ति होने पर न्याय होता है।

"न्याय" का हम अध्ययन कराते हैं। जबकि इस धरती पर जितने भी सुप्रीम कोर्ट हैं - उनमें न्याय का अता-पता नहीं है। सभी देशों के संविधानों के तीन ही कायदे हैं - गलती को गलती से रोको, अपराध को अपराध से रोको, युद्ध को युद्ध से रोको। इन तीन कायदों के रहते उनसे न्याय कहाँ मिलेगा? इन तीन कायदों के अलावा ये कोर्ट "जन-सुविधा" की बात करते हैं। सुविधा का कोई तृप्ति-बिन्दु ही नहीं है। सबके लिए सुविधा-संग्रह की चाहत को पूरा करने की सम्भावना ही नहीं है।

उससे पहले विगत में कहा गया था - "भक्ति-विरक्ति में कल्याण है।" भक्ति-विरक्ति सबको मिल नहीं सकती। भक्ति-विरक्ति "रहस्य" से शुरू होता है, "रहस्य" में ही अंत होता है। भक्ति-विरक्ति के रहस्य से पार अभी तक किसी एक व्यक्ति के वश का रोग नहीं हुआ। भक्ति-विरक्ति रहस्य से मुक्त हो जाए, शिक्षा में स्थापित हो जाए, आचरण में आ जाए, व्यवस्था में प्रभावित हो जाए - ऐसा आज तक हुआ नहीं। "भक्ति-विरक्ति से व्यवस्था होगा" - ऐसा हम "आस्था" के आधार पर अरमान करते रहे। आस्थाएं धीरे-धीरे शिथिल होता हुआ देखा जा रहा है। जब कभी भी शिक्षा की "समीक्षा-समिति" बनती है तब उसमें प्रधान रूप में कहा जाता है - "आस्था का हनन हो रहा है।" यह सब सुनने पर लगता है - लोगों के मन में कुछ तो आया है। किंतु इस स्थिति का

समाधान पाना उनसे सम्भव नहीं हुआ है।

न्याय-अन्याय की बात मनुष्य-परस्परता में ही होती है। न्याय की अपेक्षा मानव-परस्परता में ही होती है। न्याय-सुलभता का आधार है - "संबंधों की पहचान"। संबंधों के नाम सबको विदित हैं। सभी भाषाओं में संबंधों के नाम तो हैं। लेकिन संबंधों के प्रयोजनों का ज्ञान नहीं है। संबंधों के प्रयोजनों को निर्वाह करने का अधिकार बना नहीं है। जैसे - "माता", "पिता" नाम सुदूर विगत से भाषा में हैं। किंतु माता-पिता के साथ न्याय कैसे होगा, क्यों होगा, क्या प्रयोजन होगा - इसके बारे में कोई बात न शिक्षा में है, न व्यवस्था में है, न आचरण में है। अभी जितने भी समुदाय-परम्पराएं हैं - किसी में भी नहीं है। इसी कारण "अनुसंधान" करना पड़ा। अनुसंधान पूर्वक प्राप्त वस्तु को विकल्पात्मक स्वरूप में रखना पड़ा। उसको अभ्यास में लाने के लिए उपक्रम करना पड़ा।

उसी "उपक्रम" में यह सम्मलेन भी है। अपनी-अपनी जगह में हम सब शुभ के लिए कार्य कर रहे हैं। हम शुभ के लिए क्या कार्य किए, आप क्या कार्य किए - इसे सम्मलेन में परस्पर सुन कर हम उत्साहित होते हैं। अगले वर्ष पिछले वर्ष से ज्यादा शुभ के लिए कार्य करते हैं। इस ढंग से होते-होते हम यहाँ तक पहुंचे हैं।

यह जो इतनी बात आपको बताया, उसमें कुछ पूछना हो तो आपका स्वागत है।

सबको धन्यवाद! शुभाशीष! प्रणाम! और नमन!

- बाबा श्री नागराज शर्मा के उद्बोधन पर आधारित (४ अक्टूबर २००९, हैदराबाद)